GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 2
March-April:2025

# वेदो मे समाविष्ट सृष्टिसंरचना के प्रतीकात्मक स्वरुप

**Dr. Dixitaben Janak Gor**
Assistant Professor,
Government B.Ed. College Naswadi
drdixita009@gmail.com

## वेदो का वर्ण्य विषय

वेद शब्द विद् धातु से धञ् प्रत्ययक संयोजन से बनता है जिसका अर्थ है ज्ञान । जिस में जीव-जगत और ब्रह्मांड का संपूर्ण ज्ञान निहित है । यह वैदिक ज्ञान न केवल भारतीय समाज द्वारा समादृत है अपि तु विश्व के महान विद्वानोने उनकी महत्ताको स्वीकारा है । क्योंकि वेद सदियों पूर्व से मानव-जीवन के साधन बनकर उन्हे अनुप्राणित करते आये है । इनमें ज्ञान-विज्ञान, सृष्टि संरचना स्थिति, प्रलय, धर्म, दर्शन, सदाचार, संस्कृति, समाजाकि एवं राजनैतिक जीवनसे सम्बन्धित सभी विषय उपलब्ध है । ब्रह्मांड और सृष्टि का एसा कई भी विषय नही हैं जिसका वर्णन वेदो में न हो अतः एव विद्वानोंने इसे विश्वकोष के रुपमें मान्य किया है ।

## सृष्टि संरचना के प्रतिकात्मक स्वरुप

सृष्टि संरचना का यह वैदिक प्रतीकात्मक ज्ञान वैदिक सूक्तो में मणि-मुक्तकों की तरह बिखरा हुआ है । ऋग्वेद के नासदीय सूक्त, कठोपनिषद, तथा ब्राह्मणग्रंथो में इसको विशिष्ट रीति से निरुपित करते है । वैदिक विज्ञानकी इन विशिष्टताओं को आधुनिक युग के महान वैज्ञानिकोंने बडे ही प्रशंसित स्वर में स्वीकार कीया है । उनकी शोध अनुसंधान की प्रवृति एवं उससे प्राप्त निष्कर्षों से यह तत्व लगातार प्रभासित हो रहा है कि वैदिक ऋषि आध्यात्मवेत्ता होने के साथ महावैज्ञानिक भी थे । जिन्होने प्रतिको के माध्यम से दुर्लभ सृष्टि विद्या को प्रतीकों के रुपमें अपने मंत्रगान में स्वरित किया ।

वेद का यथार्थ अर्थ गुह्य, गोपनीय एवं प्रतीकात्मक होने के कारण वह अनेक उपमाओं तथा साँकेतिक शब्दो द्वारा आवृत है । वैदिक विवेचना भी विज्ञान की तरह प्रतीकात्मक है । संपूर्ण वेद

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 2
March-April:2025

की परिकल्पना रुपकों एवं प्रतीकों में ही की गई है । इन अर्थों में वेद गूढ आन्तरिक प्रतीक का ग्रंथ है । जब इन प्रतीकों का आवरण उठ जाता है तब इनका स्पष्ट स्वरुप उभरकर आता है । वेदो में निरुपित सृष्टि संरचना को समजने के लिये वेदो के निहित सृष्टि संरचना का अर्थ प्रतिकवाद को समजना जरुरी है । सभी वेद मंत्रो में निहित सृष्टि संरचना का अर्थ किया जा सकता है । यह वैदिक प्रतिकवाद की उत्पत्ति ऋषियों की प्रज्ञा से हुई है । इसका वैज्ञानिकरुप से गूढ अर्थ है ।

**सृष्टिका प्रथम सृजनतत्व : जलतन्मात्रा**

वेदमें प्रजापतिको विश्वका स्रष्टा कहा गया है । वेद के विषय में देवो का वर्णन है । यह देव प्रकृति के मुख्यतत्व आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक स्वरुप का दिव्यवर्णन ही सृष्टि विज्ञान है । विश्व के प्रथम पुरुष प्रजापति की उत्पति कैसे हुइ इस संदर्भ में शतपथ ब्राह्मण ११.६.१/२ में वर्णन है की 'सर्वप्रथम विश्व में आपः जलतन्मात्राएँ व्यापक थी ।' उन आपदेवीओने सृजनकी कामना की । उनके श्रम और तप से हिरण्यगर्भ धारण हुआ । एक वर्ष के बाद वह गर्भ से पुरुष उत्पन्न हुआ । उसी को प्रजापति नाम से जाना गया । हिरण्यमय अंड से उसकी आत्मा बनाई गई । अतः उसे ऋषिओने हिरण्यगर्भ प्रजापति का नाम दिया । अतः जलतन्मात्राएँ मूल पदार्थ है । वैज्ञानिकरुप से उसके दो स्वरुप है ।

१. जलपरमाणु

२. सूक्ष्म तरल-सलिल

आप परमाणु में हेलीयम, हाइड्रोजन, ओक्सीजन, जलतन्मात्रा और सेलेक्यूलर का मिश्रण है। सूक्ष्म तरल सलिल का वायुपुराण १४/२८ में वर्णन हैं की –

**यथा ह्यापस्तु विच्छिन्ना स्वरुपमुषयाति वै ।**

आपः के विभिन्नरुप है । जो संपूर्ण रुप से प्रसारित है या सभी को आवरण में लेती है वह आप है । इस संदर्भ में शतपथ ब्राह्मण में ६.१.१.९ इस प्रकार कहा गया है ।

**यद् आप्नोत् तस्माद् आपः ।**

**यद् अवृणोत तस्माद् आपः ।**

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 2
March-April:2025

महाभारत शांतिपर्व में ३५३/७ में दर्शाया है की -

**तस्माच्चोतिष्ठत् तद् देवात् सर्वभूतहिताद् रसः ।**

**आपो ह तेन युज्यन्ते द्रव्यत्वं प्राप्नुवन्ति च ।**

जो सर्व प्राणिओं का हितेच्छु देवतत्व है उसी से रस उत्पन्न हुआ और उसके योग से जल प्रवाहित हुआ । वैज्ञानिक परिभाषामें जाने तो जल से हि विश्वसृजन cosmology हुआ। जिस को नेबुला या गेस के पूर्वरूप कहा गया है । जिस में ईलेकट्रोनिक विद्युत कण उत्पन्न होते है ।

**पृथ्वीलोक का सृर्जन**

जलतन्मात्राओं से प्रथम सृजन हुआ । जिसमें से अनेक लोको और प्रदेशो की उत्पत्ति हुई । सांप्रत समय में पृथ्वी का जो स्वरुप है उसमे नव प्रकार के रुपांतर हुए हैं । उसका एक चतुर्थांश भाग पृथु अर्थात कठीन है । जो वायु की मात्राओं से आच्छादित हैं ।

शतपथ ब्राह्मण ६.१.३ अनुसार प्रजापति ने जलदेवता का सृजन कीया । उन्होंने मृत्तिका, शुष्काप, उषा, सिकता, शर्करा, अश्मा, अयस और औषधि वनस्पति का सर्जन सृजन कीया । प्रजापति पुरुष के भूः शब्द के उच्चारण से पृथ्वी उत्पन्न हुई । जिसे भूमि नाम दिया गया । जैमिनीय ब्राह्मण में उसे उपोदक नाम दीया गया । क्योंकी भूमि पर जलकी मात्राएँ ज्यादा थी । पृथ्वी, आपोदेवी और अग्नि का संसर्ग हुआ जिसे फेन का उदभव हुआ । उसे अपाम अर्क संज्ञा दि गई । भूमि के उपरि धनभाग को फेन और मही कहा जाता है । इसके नीचे वारि-सलिल रहता है । अग्नि और मरुतो के संयोग से सलिल धनरुप ग्रहण करता है । जिसका कठीनभाग मृत या मृत्तिका है । जब आपोदेवी भूमिमें थे तब उसके रसप्रवाह पर फेन आच्छादित होने लगे जिसमे से धन मृत्तिका उत्पन्न हुई । फेनस्वरुप स्थित धनमृत्तिका जल सूर्य के आतप से शुष्क होने लगी जिसे शुष्काप कहा जाता है । यहाँ सूर्य या आकाश के अग्नि और अंतरिक्ष के मरुतो का संपर्क होने का निर्देश मिलता है ।

यह लोक के अग्नि और अंतरिक्ष के वायु-मरुतो ने निल के पृथ्वी के सूक्ष्म रजकण Saline Particles दिये । जो पृथ्वी की दशो दिशाओ में विस्तरीत है । जिसे सूक्ष्म-पृथ्वी कहा जाता है । उसे हि वैदिक विज्ञान की परिभाषा में उषा कहा जाता है ।

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 2
March-April:2025

**पृथ्वी का स्वरुप**

न्यायशास्त्र में परमाणु को पारिमांडल्य कहते है । यह एक मौलिक पदार्थ होने से इसका परिमाण नही होता है । उस के अनन्तर हुए पदार्थो का परिमाण है । यह पृथ्वी गोलाकार है । तैतरीय ब्राह्मण २.२.६.२ के अनुसार –

**इयं वै पृथिवी सर्पराज्ञी ।**
**इयं हि सर्पती राज्ञी ।**
**देवा वै सर्पाः ।**
**तेषामियं राज्ञी ।**

अग्नि, ईन्द्र, मित्र, वरुण, सोम, सूर्य इत्यादि प्रकृति के दिव्य स्वरुप है । इसमें पृथ्वी सर्पराज्ञी कही गई हे । बृहस्पति इत्यादि ग्रहो और सभी लोक दिव्य आग्नेय तैजस रुपमें स्थित है । शतपथ ब्राह्मण १०.६.२.११ के अनुसार प्राण से अग्नि प्रकाशित है । अग्नि से वायु, वायु से आदित्य और आदित्य से चंद्रमा ।

पृथ्वी में रहे हुए सूक्ष्मरजकण ही परमाणु नही है अपि तु उसमे द्युलोक और अंतरिक्ष की विद्युतशक्ति का संचार भी है । सुश्रुत संहिता के सूत्र स्थान ३२/७ में कटु-अम्ल और लवण पदार्थों को आग्नेय कहा है । चरक संहिताके सूत्र स्थानमें २६.४० में लवण पदार्थ में जल और अग्नि का प्रमाण ज्यादा है एसा दर्शाया है । पृथ्वी के सृजनकाल में परमाणुओ के साथ उर्जाशक्ति संचारित होती है । जिसे उषा या उषर कहा गया है । समुद्र के लवणयुक्त जलमें उर्जाशक्ति के साथ परमाणुओ की संख्या अधिक होती है । इसे विज्ञान की परिभाषा में सोडियम नाईट्रेट या पोटाशियम नाईट्रेट कहा गया है ।

उषर-उषा के बाद का स्वरुप सिक्ता है । जो वैश्वानर अग्नि है । और यही आदित्य और सूर्य है । जो ये पृथ्वी पर स्थित है वो उसकी भस्म है जिसे सिक्ता कहा गया है । मैत्रायणी संहिता १.६.३ काठक कापिष्ठल संहिता में वैश्वानर अग्नि की भस्म को सिक्ता कहा है । शतपथ ब्राह्मण ७.५.२.१९ में सिक्ता को आपदेवी का पुरीष कहा गया है । जिसके दो स्वरुप है ।

१. शुक्ल २. कृष्ण

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 2
March-April:2025

सिक्ताको विज्ञान की परिभाषा में सिलीका कहते है ।जिस में सिलीकोन ओक्सीजन का मिश्रण sioz है । वैश्वानर अग्नि को ओक्सीजन कहते है और सिलीकोन ओर ओक्सीजन साथ मे ही होते है । वैश्वानर अग्नि की भस्म होने के कारण सिक्ता में परमाणु प्रकाशित होते है ।

यह सिक्ता से शर्करा उत्पन्न हुई । जिसका आकार कद छोटे कंकरो जेसा है । शर्करा में से पृथ्वी को अस्मा अर्थात पथ्थर का रुप मिला । शर्करा के विभिन्न भाग एकत्रीत हुए जिसने पर्वत का रुप लीया । शतपथ ब्राह्मण ३.४.३.१३ में दर्शाया है की गिरी और अश्म वो वृत्र का शरीर है । पृथ्वी की धरी पर पर्वत खीसने लगे जिसे पर्वतो के पक्ष्म अर्थात पंख कहा गया है वह वृत्र है । जिसके साथ ईन्द्र का युद्ध चलता हे । वृत्र के हनन से जल भिन्न हुआ तथा सूर्य ओर चंन्द्र प्रकाशित हुए ।

इस प्रक्रिया को विज्ञान की परिभाषा में समजे तो अश्मा से अयस बनता है । जिसे लोह कहते हे । खिण के पथ्थरो को उपनिषद में अश्माखण कहा गया है । ये अयस लोह प्रथम धातु है इसके बाद ताम्र और सुवर्ण बना ।

शतपथ ब्राह्मण २.२.४.३ अनुसार प्रारंभ में पृथ्वी ऋक्ष थी । अतः उपजीवनीय न थी । वृक्ष, वनस्पति, लता, औषधि आदि उसके लोम है । शनैः शनैः पृथ्वी की ऋक्षता कम होने के कारण पृथ्वी फलद्रुप बनी । सोम औषधियो का अधिपति है । सोम और पृथ्वी के योग से पृथ्वी में बीज उत्पन्न हुए ।

**अग्नि का सृजन**

तांडय म. ब्राह्मण १०.१.१ में उल्लेख है की –

अग्निना पृथिव्या औषधिभिः तेनायं (पृथिवी) लोकः त्रिवृत् ।

ब्राह्मणग्रंथो के निर्देश अनुसार पृथ्वि के उपर के भाग में औषधि वनस्पति है । जो उसके लोम स्वरुप है । मध्यभाग में पृथ्वी का शरीर है । उसके अंतिमभाग में अग्नि स्थित है । और वह विधृतकण Electrons के स्वरुपमें हे ।

**आग्नेयी पृथिवी** **तां ब्रा. १५.४८**

**अग्निगर्भा पृथिवी** **श. ब्रा. १४.९.४.२१**

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 2
March-April:2025

**यथा माता पुत्रमुपस्थे**

**विभृयादेवमग्निं गर्भे विभर्ति । श.ब्रा ६.५.१.१**

पृथ्वी के गर्भ में तेजस विधृतकण प्रसारित होके जल के साथ मिश्रित होते है । अतः इससे जल भी उष्ण होता है । पृथ्वी की यह उर्जा से ओष अर्थात उषर का रुप धारण करती है । औष को धारण करनेवाली औषधि कहि जाती है ।

**औषधय इति श.ब्रा २.२.४.५**

मैत्रायणी संहिता २.७.१० में कहा गया है कि 'हे अग्नि ! तुम औषधि और वनस्पति का गर्भ हो । तुम विश्व के सभी पदार्थो का गर्भ हो और तुम जलतन्मात्राओ का गर्भ हो ।'

पृथ्वी के गर्भ में अग्नि के इलेकट्रोनस बढते गये और उपर की और आते गये । यह अग्नि को औषधिओ ने अपने अंदर समाविष्ट किया । अतः वह अग्नि शांत हुआ और बढने से रुक गया । पृथ्वी का बहारी रुप औषधि वनस्पति है । जिसके मूल पृथ्वी के गर्भ में है । शमीवृक्ष और अश्वत्थवृक्ष में विशेषरुप से अग्नि स्थित है । तैतिरीय ब्राह्मण १.१.३.१० में उल्लेख है की – 'प्रजापति ने अग्नि का सर्जन कीया अतः पृथ्वी को भय उत्पन्न हुआ की अग्नि मुजे जला देगा । अतः उस अग्नि का शमीवृक्ष ने शमन कीया ।' अतः देवो से दूर छुप कर अग्नि ने एक वर्ष तक अश्वत्थवृक्ष में वास कीया । फिर उसने वेणु में प्रवेश कीया । अतः यज्ञकार्य में अश्वत्थ और शमीवृक्ष की समिधा उत्तम मानी जाती है ।

**अन्य प्रतिकात्मक सर्जन**

**मातरिश्वा**

पृथ्वी से अग्नि तत्व को मातरिश्वा ने लिया । अग्निकाण्ड (बिग बैंग) से प्रज्वलित तरल चारों ओर प्रसारित हुआ । वेद में इस घटना का नाम मातरिश्वा है । यही विश्व का प्रसार है । जान डी बैरो ने भी 'द आर्टफुल यूनीवर्स' में इसे प्रसारित विश्व के नाम से संकेत किया है । बिग बैंग से जो आदि संवेद उदभूत होता है, उससे समस्त प्रज्वलित द्रव्यमण्डल तीव्र गति से चारों ओर प्रसारित होता है । मातरिश्वा अग्निकाण्ड से उत्पन्न महाशक्ति से प्रज्वलित द्रव्य के तीव्र गति से चारो ओर प्रसार का द्योतक है । मातरिश्वा प्रवाह की उत्पत्ति आदिकाल में हुई थी । ऋग्वैदिक ऋचा

१.१४३.२ में इसका संकेत मिलता है । आदिकाल में महामण्डलाकार प्रज्वलित अग्निकाण्ड की परिणति मातरिश्वा के रूप में हुई जिसमें प्रज्वलित द्रव्य चारो ओर गतिमान हुआ । इसी बिखरे हुए एवं तीव्र गति से प्रसारित हुए द्रव्य से कालान्तर में गैलेक्सियो, नक्षत्र मण्डलों व प्रकाशित-अप्रकाशित लोकों की उत्पत्ति हुई ।

**प्रकृति**

पृथ्वी का मूल उत्पादन कारण ईश्वरीय कामना के परिणाम स्वरूप परिवर्तित व विकसित हुआ । इसी से सृष्टि उत्पत्ति की स्थिती बनी । बाद में भौतिक द्रव्य प्रजाओं और प्रकृति के विकारो को उत्पन्न करने में भी समर्थ हुआ । इसे ही प्रजापति कहा गया है । यही प्रजापति वेदों मे अथर्वा नाम से अलंकृत हुए । गोपथ ब्राह्मण के अनुसार जब प्रकृति में ईश्वर की ईक्षण शक्ति के अनुरूप सृष्टि उत्पत्ति हेतु पृष्टभूमि तैयार हो जाती है, तब उस प्राकृतिक स्वरुप को अथर्वा कहते है । ऋग्वेद में उर्वशी को सर्वव्यापी प्रकृति की ओर इंगित किया गया है । उर्वशी को अप्सरा कहा गया है । उर्वशी एवं अप्सरा भौतिक तत्वों के वैदिक प्रतीक है । अप् क्रियात्मक मूल तत्व है एवं अप्सरा रुप का पर्याय है । उर्वशी विशाल क्षेत्र में नियंत्रण करने वाली एवं विस्तृत क्षेत्र को प्रभावित करने वाली है । यह प्रकृति का क्रियात्मक रूप आपः या माया है । वैदिक मंत्रो में पुरुरवा जीवात्मा के रूप मे वर्णित है ।

**मित्र-वरुण**

मित्र-वरुण के वीर्य के संयुक्त रूप से उर्वशी के गर्भ में स्थापना से वसिष्ठ की उत्पत्ति बतायी गयी है । मित्र-वरुण मौलिक कण है, जो विपरीत चार्ज वहन करते है । यदि वरुण धनात्मक आवेश कणों का समुच्चय है तो मित्र ऋणात्मक आवेश का समुच्चय है । ये दोनों मिलकर आधुनिक विज्ञान का द्रव्यभाग बनाते हैं । मित्र-वरुण के अंशभूत कणों के संयोग से एक उदासीन (न्यूट्रोन) कण की उत्पत्ति होती है । यह न्यूक्लियर का प्रमुख भाग है । इस नाभिकीय द्रव्य का नाम वसिष्ठ है । इस प्रकार वसिष्ठ विज्ञान के न्यूट्रोन कण है ।

ऋग्वेदिक ऋचा में वसिष्ठ (न्यूट्रोन) की रचना का संकेत है । ऋषि शब्द का प्रयोग भी भौतिक शक्ति के लिए हुआ है । अथर्ववेद में 'सप्त ऋषयः' पद भौतिक शक्तियों के लिए प्रयुक्त हुआ

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 2
March-April:2025

है । सप्तवर्गी परमाणुओ को यहाँ सप्तऋषि कहा गया है । ऋग्वेद के अनुसार भी ऋषि वसिष्ठ भौतिक सत्ताएँ है । यह मूल भौतिक तत्व के नाभिक का परिणाम है ।

इस प्रकार मित्र-वरुण के अंशभूत कणों के संयोग से जो प्रथम उदासीन कण बनता है, उसका ऋग्वैदिक नाम वसिष्ठ है । इस प्रथम यौगिक की रचना में स्थायित्व लाने के लिए एक और कण भाग लैता है, उस कण को ऋग्वेद में अगत्स्य कहा गया है । अगत्स्य मित्र-वरुण का अंश नही है । अतः यह अर्यमा उदासीन कणों का समूह है । इस प्रकार अगत्स्य भी उदासीन कण है । प्रोटोन तथा इलेक्ट्रोन संयोग करके न्यूट्रोन बनाये हैं परन्तु इस न्यूट्रोन रचना में एक उदासीन कण एण्टी इलेक्ट्रान न्यूट्रीनो भाग लेता है । इस संदर्भ में अगत्स्य एण्टी एलेक्ट्रान न्यीट्रीनो है । हेंज आर पेजल्स ने 'द कॉस्मीक कोड' में इस कण का इसी प्रकार उल्लेख किया है । ऋग्वेद के सोम को विज्ञान की विकिरण ऊर्जा कहा जा सकता है। प्रकृति अपने आपको दो रूपों मे व्यक्त करती है । प्रकृति का द्रव्य भाग मित्र-वरुण में निहित है ।

**तेजस्**

द्रव्य ब्रह्म की अंशभूत तेजस् शक्ति है, जो क्रमशः आपः, बृहती आपः व अपाँ नपात् मे रूपांतरित होती हुई सूर्य रुप में उदभूत होती है । आपः मूल भौतिक कणों की उद्वेलित क्रियाशील अवस्था का समग्र रूप का प्रतीक है । क्रियात्मक होते ही त्रिवर्गी शक्ति की परस्पर क्रिया एवं संयोग के परिणामस्वरूप यौगिकों की उत्पत्ति हुई । प्रकृति के इस विस्तृत रूप को बृहती आपः कहा गया है । यह प्लाइम्मा अवस्था के सदृश्य है । अपाँ नपात् नाभिकीय अवस्था का ध्योतक है । इस प्रकार द्रव्य मूल प्रकृति का शक्त्यंश है, जिसका वसिष्ठ की उत्पत्ति से निकट सम्बन्ध है ।

**मरुत**

मरूत आकाश में व्याप्त शक्ति है जिसका कार्य ऋभुओं को पाना अर्थात बल का संतुलन करना है । मरुत शक्ति विध्युत् बल एवं गुरुत्वाकर्षण बल से सम्बन्धित है । यह न केवल विदुयुत बल का प्रतिनिधित्व करती है वरन् यह गुरुत्वाकर्षण बल का भी नियमन करती है । चार बलों में से इन दो बलों का प्रभाव क्षेत्र असीम एवं व्यापक है । मरुत व्यापक बल का कार्य करते हैं । ये अनेक प्रकार के बलों का निरन्तर संरक्षण करते हैं । इनकी बल रेखाएँ चक्राकार गति करती हैं

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 2
March-April:2025

। इनका बल अखण्ड है । मरुत् बृहत् गुरुत्वाकर्षण बल है, जो लोगों को थामता है और सृष्टिरथ संचालित करता है ।

**वसु**

वसु मूल तत्वों से बने यौगिको की संज्ञा है और महावसु मूल तत्वों का प्रतीक है । ऋग्वेद में इन्द्र और वरुण को महावसु बताया गया है । मंत्रानुसार इन्द्र सम्राट है तथा वरुण स्वराट् । ईश्वर सर्वनियंत्रक सर्वोच्च सत्ता है तथा वरुण अपने सीमित क्षेत्र भौतिक सत्तात्मक जगत् का राजा है । मित्र, वरुण, अर्यमा तीनों महावसु है । इन्द्र सृष्टि का निमित्त कारण अर्थात् रचयिता ईश्वर वाचक है तथा मित्र, वरुण, अर्यमा संयुक्त रूप से द्राव्यिक कारण के वाचक है । इस प्रकार महावसु मूल सत्तात्मक तत्व है जो वसु के कारण है, तथा वसु, महावसुओं के यौगिक हैं ।

वेदो में उषा, वर्षा, अग्नि, सूर्य, चन्द्र, मातरिष्वा वायु, प्रकृति जैसे प्रकृति तत्वोको देवो के प्रतिकरुप दर्शाया है । यह प्रकृतिका आधिभौतिक आधिदैविक और आध्यात्मिक स्वरुप का वर्णन ही सृष्टि विज्ञान है । इन देवो के प्रतिकात्मकरुप में ऋषिओ ने सृष्टि संरचना समजाई है । इस प्रकार वैदिक विज्ञान के अनुसार चेतन परब्रह्म ही सचेतन भाव व प्रत्येक कण का क्रियात्मक भाव बनकर उनमें प्रवेश करता है ताकि आगे जीवसृष्टि का विस्तार हो पाये । इसी को प्रत्येक दर्शन शास्त्रमें वस्तु का अभिमानी, देव कहा जाता है । प्रत्येक रुपमें (ट्रान्सफर मोशन में) यह चेतन प्राणतत्व सदैव उपस्थित रहता है ।

**अणो अणीयान, महतो महीयान ।**

**संदर्भग्रंथ**

शुक्लयजुर्वेदसंहिता, तत्वबोधिनी हिन्दीव्याख्योपेतम् चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी 2011

ऋग्वेदभाष्यभूमिका, सायणभाष्य, वाराणसी 1963

मैत्रायणी संहिता, श्रीपाद दामोदर सातवोळकर, पारडी 1888

ऐतरेय ब्राह्मण, ए. हेंग, मुंबइ 1863

शतपथ ब्राह्मण, ए. वेबर, वाराणसी 1965

निरुक्तम्, शशिप्रभा हिन्दी व्याख्योपेतम्, वाराणसी 2015

GYANBODH
ISSN:3048-9792
Volume: 2
Issue: 2
March-April:2025

वैदिक साहित्यका इतिहास, चौखम्बा सुरभारती, वाराणसी 2005

વૈદિક સાહિત્ય અને સંસ્કૃતિ, યુનિવર્સિટી ગ્રંથ નિર્માણ બોર્ડ, અમદાવાદ 1990

યજુર્વેદ શતપથ ભાષા ભાષ્ય, ભાગ–1 અને 2, વેદપ્રકાશ સમિતિ, અમદાવાદ 1983

ઉપનિષદ નવનીત, સસ્તુ સાહિત્ય વર્ધક કાર્યાલય, મુંબઈ 1996